पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

पूज्यपाद गुरुदेव का जन्म लगते असौज तीज सन् 1942 में ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद, जनपद गाजियाबाद (पहले मेरठ) उत्तर प्रदेश में हुआ था। इनके पिताजी का नाम श्री नानक चन्द और माता जी का नाम श्रीमती सोना देवी था। लगभग दो मास की अवस्था में श्वासन में लेटने से ही कुछ समय के उपरान्त शिशु की गर्दन दोनों ओर हिलने लगी और होठ फड़फड़ाने लगे। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होने पर अज्ञानतावश उपचार प्रारम्भ हो गया। परन्तु उस विशेष अवस्था में जाने की घटनाएँ बढ़ती रहीं और आयु बढ़ने के साथ-साथ मन्त्र-पाठ और प्रवचन स्पष्ट सुनाई देने लगा। छः वर्ष की आयु में इन्हें भयानक चेचक निकली जो इनके मुख-मण्डल पर अपनी स्मृति छोड़ गई।

सात वर्ष की अल्यायु में ही इनके पिताश्री ने अपने गाँव में ही पशुओं व कृषि के कार्य के लिए नौकर रख दिया। धीरे-धीरे इनके प्रवचनों की क्रिया को मनोरंजन व कौतुक का साधन बनाया जाने लगा। एक दिवस प्रवचन की प्रक्रिया के पश्चात् अत्याधिक पिटाई के कारण लगभग 15 वर्ष की अवस्था में भीषण परिस्थितियों में मध्य रात्रि में गृह को त्यागकर विचरण करते हुए अपनी कर्मभूमि बरनावा जा पहुँचे वहाँ पर आप योग मुद्रा में समाधिस्थ होकर प्रवचन करने लगे, जिसकी सुगन्धी आस-पास में तीव्रता से फैल गई। आपने अपने प्रवचनों के माध्यम से वेद ब्रह्म पारायण यज्ञों का आयोजन करना शुरु कर दिया। जन-समूह के अथाह प्रेम व सहयोग से बरनावा लाक्षागृह पर पाँच यज्ञशालाएँ, महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, आश्रम व गऊशाला की स्थापना की, जिसका प्रबन्ध उनके द्वारा स्थापित श्री गाँधी धाम समिति की देखरेख में होता है।

पूज्यपाद गुरुदेव 28 दिसम्बर 1961 में पहली बार दिल्ली प्रवचन के लिए आए। अथाह ज्ञान के भण्डार, आध्यात्मिक जगत की महान् व अद्‌भुत विभूति के प्रवचन सुनने के पश्चात् प्रवचनों को टेप करने का निर्णय लिया गया और कुछ समय के उपरान्त प्रवचनों को टेप करके प्रकाशित करने के लिए पूज्यपाद गुरुदव की संरक्षकता में वैदिक अनुसन्धान समिति का दिल्ली में गठन हो गया। जन्म जन्मान्तरों के शृङ्गी ऋषि की पुण्य आत्मा ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज इस अज्ञानता के युग में वैदिक संस्कृति का पुनः से उत्थान करने के लिए जीवनपर्यन्त लगे रहे। ऋषि-मुनियों ने अनुसन्धान के द्वारा भौतिक व आध्यात्मिक विज्ञान को अपने जीवन में कितना साकार किया है उसकी अथाह चरमसीमा इनके प्रवचनों में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। इस अथाह ज्ञान को मानवता के लिए आचरण व व्यवहार में लाने का सरल व श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित किया है और साहित्य की गुत्थियाँ स्पष्ट की हैं। जिससे मानव अपना व जनसाधारण का कल्याण करते हुए इस भव सागर से पार हो सकता है।

यह दिव्य आत्मा 15 अक्टूबर 1992 को पचास वर्ष की अवस्था में ब्रह्ममूहुर्त के समय अपने लोकों को गमन कर गई। **–वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)**

॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे देव! हे सखा! हे मित्र! तू इस सँसाररूपी राष्ट्र का स्वामी है। इस राष्ट्र को शान्तिदायक, महान् और ऊँचा बना। विधाता! यही नहीं, हम सँसाररूपी राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। हम सबसे पूर्व यह चाहते हैं कि जो हमारा हृदयरूपी राष्ट्र है यह हर प्रकार से ऊँचा बना रहे। यह हमारी हृदयरूपी जो अयोध्या है इसमें वह राम विराजमान रहे, जिस रामराज्य के ऊपर सँसार व्याकुल होता चला जा रहा है। हे विधाता! आज हम शरीर में वह अयोध्या चाहते हैं जिसमें रामराज्य हो जाए। हमारी यह अयोध्यारूपी नगरी ऊँचा बन जाए और वह विधाता, इस नगरी में ओत-प्रोत हो जाए। वह विधाता, इस राष्ट्र का स्वामी बन जाए।

हे विधाता! आज हम उस राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हैं। जिस राष्ट्र में हमारा जन्म हो, जो राष्ट्र हमारे शरीर का एक ऊँचा भाग हो। कैसे बनाएँगे, विधाता? जब तक आपकी करूणा नहीं होगी, विधाता! आपकी दी हुई प्रेरणा हमें नहीं मिलेगी। तब तक हम इस सँसार का, अपने शरीर रूपी राष्ट्र का उत्थान किसी भी प्रकार नहीं कर सकते, न ही इसका निर्माण अच्छी प्रकार कर सकते हैं।

प्रभु! हम अपना ही कल्याण नहीं चाहते, सँसार का कल्याण चाहते हैं। जब सँसार में रहने वाले प्राणियों का हृदय, अयोध्या के तुल्य बन जाएगा। रामराज्य सबके हृदय में रमण कर जाएगा। उस काल में शान्ति का प्रदर्शन हो जाएगा।

विधाता! आज हम भी अपना प्रदर्शन कर रहे हैं। हम भी अशान्ति में हैं। हमें शान्ति नहीं मिल रही हैं।

पूज्यपाद-गुरुदेव

अंक : 548 कुल पृष्ठ संख्या समग्र अंक : 623
वर्ष : 46 44 समग्र वर्ष : 52

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय	पृष्ठ संख्या
1. प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	3
2. अनुक्रम		4
3. महाराजा अश्वपति का राष्ट्र	पूज्यपाद-गुरुदेव	5-21
4. यम-नचिकेता सम्वाद (मोक्ष की पगडण्डी)	पूज्यपाद-गुरुदेव	22-36
5. आग्नेय जीवन	पूज्यपाद-गुरुदेव	37
6. ऋषियों के उद्‌गार		38
7. दान, पुस्तकों की सूची व पुस्तक प्राप्ति के स्थान तथा सूचना इत्यादि		39-42

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गुणगान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''सँहिता'' के रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से है–

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)
पंजाब नैशनल बैंक, खान मार्केट, नई दिल्ली
बैंक खाता नं. - 0149000100229389, IFSC Code – PUNB–0014900
website : www.shringirishi.in
Email : contact@shringirishi.in

।। ओ३म् ।।

महाराजा अश्वपति का राष्ट्र

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महान् हैं, वह परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गए हैं। क्योंकि यह ब्रह्माण्ड उस परमपिता परमात्मा का आयतन माना गया है। प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही उस परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता रहता है उन उड़ान उड़ने वालों में बहुत से ऋषि इस प्रकार के हुए हैं जिनका अनुसरण उनकी विचित्र एक महान् प्रतिक्रिया रही है। आज का हमारा वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन कर रहा है, उसके गुणों का वर्णन कर रहा है। वह अनन्तमयी दृष्टिपात आने वाला है, प्रत्येक मानव उस परमपिता परमात्मा की सृष्टि को जब निहारने लगता है तो गम्भीरता से निहारता है, अपने में वह आन्तरिक मुद्रित हो जाता है। उस मुद्रा में प्रवेश हो करके निहारता रहता है, परन्तु जब वह संसार को अच्छी प्रकार जान लेता है, और व्यष्टि और समष्टि में दोनों का एक रस बना देता है, तो ज्ञान और विज्ञान के पश्चात् जो एक विवेकमयी धारा उत्पन्न होती है, जब यह विवेक अपने में जागरूक हो जाता है तो वह परमपिता परमात्मा का वह अमूल्य दृष्टि से उसके विज्ञान को और भी रूपों में निहारने लगता है परन्तु वह कैसा विचित्र पुरुष है जो परमपिता परमात्मा को

एक अमूल्य आभा में निहारता रहता है और उस निहारने का परिणाम यह होता है कि उसके हृदय की जो ग्रन्थियाँ हैं उनका स्पष्टीकरण हो करके वह इस ब्रह्माण्ड को अपने में ही दृष्टिपात करने लगता है।

प्रत्येक प्राणी की आकाँक्षा

मैं विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ। हमारा विषय कुछ और चल रहा है। आज मैं प्राण सूत्र में तुम्हें पिरोना विशेष नहीं चाहता हूँ क्योंकि वह पिरोना ही ब्रह्म वर्तो प्रवाह। इससे पूर्व काल में हम नाना प्रकार के क्षेत्रों की चर्चाएँ कर रहे थे, परन्तु जब हम नाना प्रकार के यागों में परणित होते हैं और सृष्टि के प्रारम्भ के ऋषि-मुनियों ने याग के ऊपर अपनी टिप्पणियाँ जब प्रारम्भ कीं तो यह संसार एक यज्ञमयी दृष्टिपात आने लगा। ऋषि-मुनियों ने उसी नृत्य को समाविष्ठ हो करके प्राण और अपान में रत्त हो करके उदान में उसकी पुट लगा करके और समान उसके ऊपर विश्राम कर जाता है। वह जो उड़ान ब्रहे, वह जब अपने में विश्वामित्र हो जाता है तो इस ब्रह्माण्ड और याग को एक ही स्वरूप में वह दृष्टिपात करने लगता है। मानव का जितना भी क्रियाकलाप है वह सर्वत्र वास्तविक रूपों में जब आता है तो वह याग में भासने लगता है। जब याग में वह भासता रहता है तो महानता का प्रायः दर्शन हो जाता है। प्रत्येक मानव के हृदय में यह आकाँक्षा लगी रहती है कि मैं उस पगडण्डी को ग्रहण करना चाहता हूँ जिस पगडण्डी को ग्रहण करने से मेरा सखा मुझे प्राप्त हो जाए। मेरा देव! मैं देव की देवत्वता को दृष्टिपात करने लगूँ। प्रत्येक मानव को यह आकाँक्षा लगी रहती है, प्रत्येक मानव अपने में सुखद और आनन्द की प्रतिभा को चाहता रहता है। चाहे वह याज्ञिक हो, परन्तु भौतिक विज्ञान में हो, चाहे वह आध्यात्मिक विज्ञान में हो, चाहे वह राष्ट्रीय स्तरों वाला प्राणी हो, चाहे अराष्ट्र वाला हो, प्रत्येक प्राणी उस पगडण्डी को चाहता

है, जिस पगडण्डी को गमन करने के पश्चात् मेरे मार्ग में एक आनन्द की अनुभूति मुझे प्राप्त हो जाए, उसको वह चाहता रहता है।

महाराजा अश्वपति का क्रियाकलाप

आज का हमारा वेद मन्त्र बेटा! क्या कह रहा है? मैं महाराजा अश्वपति की चर्चाएँ कर रहा हूँ। कई समय हो गए हैं, महाराजा अश्वपति एक महान् राजा थे। उस राजा के क्रियाकलाप में, उसकी क्रियाओं में यह रहता था कि वह स्वतः अपने में कला-कौशल करके अपने कृषि का उद्गम करके उस मानव अन्नाद को पान करते थे और उस अन्न को पान करके ही मुनिवरो! देखो वह राष्ट्र, राष्ट्र की राष्ट्रीयता उद्घोष करती रहती थी अथवा उसका पालन करते रहते थे। परन्तु जब यह विचार आता है कि वह अपने में राजा कृषि का उद्गम करके ही पान क्यों करते थे? देखो माता वसुन्धरा मानव को परिश्रम के पश्चात् नाना प्रकार की वनस्पतियाँ और देखो नाना अन्नाद को देती है, जैसे मेरी प्यारी माता अपने बालक को लोरियों का पान कराती हुई और वह उसे ऊर्ध्वा में उद्घोष करती है और जैसे माता मदालसा का जीवन मुझे प्रायः हमें स्मरण आ रहा है। माता कौशल्या का जीवन भी प्रायः स्मरण आता रहता है। वह जब लोरियों का पान कराती है माता तो अपने बाल्य को अपने विचारों में महान् बना करके और बाल्य को एक महानता की शिक्षा देती है और वह बालक को महान् बना देती है, पवित्र बना देती है। तो वह जो उसकी पवित्रता है वही तो उसके जीवन के एक सार्थकता का एक मूलक माना गया है। तो इसी प्रकार राजा अपने राष्ट्र में उस अन्न को पान करके यह चाहता है कि मेरा राष्ट्र का जितना प्राणीमात्र है, वह महान् बना रहेगा। प्राणीमात्र में सदैव प्रीति की तरङ्गें ओत-प्रोत हो जाएँ। राजा के हृदय में यह आकाँक्षा प्रायः लगी ही रहती है। राजा इसलिए स्वयम् उद्गम कृषि का करना और देखो राष्ट्र को महान् और बुद्धिजीवी बनाने का उनका एक क्रियाकलाप रहता था।

महाराजा अश्वपति का आचार्यों से मन्थन

मेरे प्यारे मुझे वह काल स्मरण है, एक समय महाराजा अश्वपति ने एक सभा की। जितने भी राष्ट्र में विद्यालय थे, उन विद्यालयों के राष्ट्रीय कृतियों में ब्रह्मा, आचार्यों को निमन्त्रित किया और आचार्यों की एक सभा हुई और महाराजा अश्वपति ने सभा में अपना यह उद्घोष किया कि हे आचार्यजनो! तुम अपने जीवन की आचार सँहिता बनाते रहते हो। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि राष्ट्र में विद्या का जो घोष है, जिस विद्या को तुमने निगला है वह विद्या तुम ब्रह्मचारियों को प्रदान करते हो, विद्यार्थियों को प्रदान करते रहते हो। उससे तुम क्षत्रिय और वैश्य, शूद्र इनमें इनकी बुद्धि को एक अँकित करते हुए, देखो तुम चुनौती प्रदान करते हो। परन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि यह राष्ट्रीयता की जो विद्या है यह और कैसे ऊँची बन सकती है? उसका कोई हमें उद्घोष कीजिए। आचार्यजनों ने कहा कि हे राजन्! यदि तुम हमारे वाक् को स्वीकार करते हो तो हमारे जीवन में यह आता है कि यदि वह ब्रह्मचारी विद्यालय में अध्ययन कर रहा है, जो ब्रह्मचारी माता की लोरियों का पान कर रहा है, गृह आश्रम में जिस ब्रह्मचारी का निर्माण हो रहा है, वह स्वतः अपने में सुगन्धित हो जाए। जब वह विचारों की सुगन्धि से सुगन्धित होगा तो बाह्य जगत् की जो अमूल्य सुगन्धि है, उसको वह जान करके राष्ट्रीयता में परणित करता रहेगा।

राजा ने कहा, हे आचार्यों! मैं तुम्हारे उद्देश्य को जान नहीं पाया हूँ। उन्होंने कहा, प्रभु एक समय हमारा विद्यार्थियों का एक मानो समूह द्वितीय राष्ट्र में पहुँचा। परन्तु वह जब ब्रेतकेतु राष्ट्र में पहुँचा तो माधुरी माधुर्य एक राजा थे जब उसके समीप पहुँचा तो विद्यालयों का ब्रह्मचारियों ने निरीक्षण किया और ब्रह्मचारियों ने जब निरीक्षण किया तो उन्होंने दृष्टिपात किया, प्रत्येक ब्रह्मचारी विद्यालय में अपने-अपने आसनों पर विद्यमान हो करके याग की प्रतिक्रिया को रचा रहा है, याग

की प्रतिभा में रत्त हो रहा है। जैसे महाराजा वशिष्ठ मुनि के आश्रम में नाना ब्रह्मचारी प्रातःकालीन याग में परणित हो करके वह अपने में उद्घोष आचार्यों से ब्रह्म-विद्या का पान करते थे। परन्तु देखो कोई भी मानव हो इस संसार में राजा हो चाहे प्रजा हो, प्रजा में भी विद्यार्थी वर्ग हो, चाहे वह आचार्यजन जब तक उसमें याग की, याग का कर्मकाण्ड नहीं आ सकेगा, सत् का आचरण नहीं करेगा, राष्ट्र को राष्ट्रवादी नहीं मानेगा और अपने में, अपने जीवन के राष्ट्र को ऊँचा नहीं बना सकेगा तब तक यह जगत् ऊँचा नहीं बनेगा। आचार्यों ने जब ऐसा कहा तो राजा ने कहा तुम्हारे आश्रय को नहीं जाना हूँ अब भी। परन्तु आचार्यों ने कहा प्रभु जब तक मानव अपने स्वतः आचार-सँहिता नहीं बनाता है और उसकी जो आचार-सँहिता है वही उसको देखो महान् बनाती है। राजा अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो राजा को स्वतः अपनी आचार-सँहिता महान् बनानी होगी और जब उसकी आचार-सँहिता पवित्र बनती है तो प्रजा की बनती रहेगी और जब प्रजा की बनेगी तो यह संसार की बनेगी। इस प्रकार का विचार उन्होंने व्यक्त किया—आचार्यों ने।

विद्यालयों में गौ की सेवा

मेरे प्यारे! देखो राजा ने कहा तो आज से तुम्हें एक नियमावली देते हैं कि तुम्हारे विद्यालयों में प्रायः प्रातःकालीन गऊओं का पालन होना चाहिए, गौ की सेवा होनी चाहिए। गौ कौन है? गौ दूध देने वाले पशु को भी गौ कहा जाता है, परन्तु गौ नाम इन्द्रियों को भी कहा गया है। मानव की देखो ब्रह्मचारियों की इन्द्रियों पर सँयम होना चाहिए, जब इन्द्रियों पर सँयम हो जाता है तो 'गौ घृतम् ब्रह्मवाचाः यागाऽहम्' वह जो दुग्ध देने वाला पशु है उसको मन्थन किया जाता है और मन्थन करके उसमें श्रद्धामयी घृत का जन्म होता है। जैसे योगीजन अध्ययन करता रहता है, दर्शनों का अध्ययन करता रहता है, दर्शनों का अध्ययन

करते-करते उसे ज्ञान हो जाता है और ज्ञान के पश्चात् उसे विवेक हो जाता है तो विवेक क्या है? इसी प्रकार जैसे गौ का दुग्ध है उसको मन्थन किया जाता है और मन्थन करके श्रद्धामयी घृत का जन्म होता है। तो इसी प्रकार मुनिवरो! देखो घृत के तुल्य श्रद्धामय प्रहा एक विवेक का जन्म होता है और वह जो विवेकी पुरुष है, वह जो विवेक में अपने को ले जाता है, वह जो विवेकी है वही तो राष्ट्र और समाज को ऊँचा बनाता है। अपनी आचार-सँहिता उसकी बन गई है क्योंकि उसने संसार के स्थूल जगत् को त्याग दिया है। अपने विचार आकृतियों में रत्त हो करके विवेक को अपना लिया है।

विवेक किसे कहते हैं? किसी भी वस्तु में उसकी आसक्ति नहीं रहती। किसी भी वस्तु में वह आसक्त नहीं होता, वह केवल जो भी क्रियाकलाप हो रहा है वह भी प्रभु के आश्रित कर देता है और प्रभु का जगत् यह स्वीकार करता है और प्रभु का यह राष्ट्र स्वीकार करके वह संसार में अपने जीवन का, जीवन का अवरोध करने लगता है तो वह विवेकी पुरुष अपने में महान् बन करके संसार को, राष्ट्र को ऊँचा बना रहा है। राजा ने यह घोषणा कराई कि ब्रह्म तुम्हारे यहाँ गऊओं का पालन होना चाहिए। **गऊ किसे कहते हैं?** एक तो विवेकी पुरुष गौ के दुग्ध का मन्थन कर रहा है। वह कौन-सा दुग्ध है? जैसे मानव की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं और पाँच ज्ञानेन्द्रियों का वह विषय एकत्रित करता है। उसके दुग्ध, उसके विषय रूपी दुग्ध को एकत्रित करता है। जैसे मैंने साकल्य की कल्पना की है, वह उसे एकत्रित करता है। नेत्रों से वह रूप को लेता है, घ्राण से वह मानो सुगन्धि को लेता है, मन्द सुगन्ध को लेता है और देखो वह श्रोत्रों से शब्द को लेता है, त्वचा से स्पर्श लेता है, प्रीति लेता है और रसना से रसों को लेता है। परन्तु देखो इनका वह एक विषय व्रताम् वह इन्द्रियों को ब्रह्म देखो उसके दुग्ध को निकाल लेता है। वह इन्द्रियों का दुग्ध कहलाता है और उनका जब मन्थन करता है, जब उन विषयों का मन्थन करता है उसका

चिन्तन करता है, विशाल चिन्तन करता है तो नवीन ब्रह्माण्ड उसके समीप आ जाता है। कैसा नवीन ब्रह्माण्ड आ गया है?

देखो जो अग्नि नेत्रों में समाहित थी वह अग्नि उसके समीप आ गई है जो तेजोमयी थी। पृथ्वी का जो सुगन्ध और गन्ध है वह उसका रूप है, वह भी उसके स्वरूप को जान गया है। प्रीति के स्वरूप को जान गया है वह रसों को, षट् रसो को जान करके, चन्द्रमा के रूप में और देखो जल के रूप में वह संसारमयी रसना को दृष्टिपात करने लगता है।

मैं विशेष विवेचना नहीं, केवल विचार यह कि इनका वह मन्थन करता है और वह विवेक रूपी घृत का जन्म हो जाता है, ज्ञानरूपी आभा का जन्म हो जाता है। वह महान् बन करके अपने जीवन की देखो विवेकमयी आचार-सँहिता बना करके वह योगेश्वर बन जाता है। तो बेटा! मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। तुम्हें केवल परिचय यह देने के लिए आया हूँ कि हमें 'घृतम् ब्रह्ममृ' राजा अवश्वपति ने अपने राष्ट्र में यह घोषणा की कि मेरे राष्ट्र में गौ का पालन होना चाहिए विद्यालय में। तो गौ का पालन होने लगा। गौ के दुग्ध को निकाला जाने लगा और निकाल करके उसका श्रद्धामयी घृत को निकाला गया। राजा से यह प्राप्त किया गया कि हे राजन्! गौ का घृत हो गया है अब हम क्या करें? तो राजा अश्वपति ने यह कहा 'यज्ञं ब्रह्मा व्रतम् देवो ब्रह्मा।' वेद की आख्यायिका उच्चारण करके राजा ने कहा कि मेरे राष्ट्र में क्या विद्यालयों में याग होना चाहिए। उस याग से ही संसार की प्रतिक्रिया का जन्म होता है। राजा अश्वपति के राष्ट्र में यह घोषणा हुई कि इस घृत के द्वारा यह श्रद्धामयी घृत है, यह अग्निमयी घृत कहलाता है, यह गौ ब्रह्मा यह अग्नि है, गौ और गौ से दुग्ध और दुग्ध से घृत और घृत से अग्नि उसमें ओत-प्रोत होती है।

राष्ट्र में याग का उद्घोष

कैसी विचित्र धारा है मेरे देव की मुनिवरो! देखो जब याज्ञिक याग करता है तो याग करके वह उसमें स्वाहा देता है, आहुतियाँ देता है, हुत करता है। तो वही श्रद्धामयी घृत मानव को द्यौ लोक में पहुँचा देता है। वायुमण्डल पवित्र बन जाता है। वायुमण्डल में एक महान् धारा का जन्म हो जाता है, जिस धारा को पान करके मानव अमरावती को प्राप्त हो जाते हैं। तो विचार विनिमय क्या है? महाराजा अश्वपति ने यह अपने विद्यालयों में जा करके यह घोषणा की कि प्रत्येक ब्रह्मचारी याज्ञिक में यागों में परणित होने वाला हो, याग की प्रतिक्रिया जाने और यज्ञशाला के अङ्ग-सङ्ग विद्यमान हो करके वह जल को परोक्षण में लेते हैं, जल को परोक्षण में ले करके जल का आचमन करते हुए वह कहते हैं, प्रभु से, हे प्रभु! यह जो जल है यह अमृत है। यह प्राणवर्द्धक है। जब कृषक की भूमि सुखद हो जाती है और उसको जब जलोमयी अमृत प्रदान कर देते हैं तो अन्नाद् को ले करके इस मानव के समीप आ जाती है। यह जल अमृत है, उदान में जब यह प्राण प्राणित होता है तो एक प्राणसत्ता को जन्म देता है वही अमूल्य से प्राणसत्ता है। उसे पान करके कहता है 'सम्भूति ब्रह्मा अमृताः' हे देव! मैं अमृत को पान कर रहा हूँ। अमृत को अङ्ग-अङ्ग से स्पर्श कर रहा हूँ और अङ्ग ब्रह्म वाचो कहता हूँ कि मेरी वाक्शक्ति इतनी माधुर्य हो, इतनी पवित्र हो, जैसे यह जल अपने में शीतल और पवित्र प्राणवर्द्धक है। मेरी वाणी में प्राणसत्ता होनी चाहिए। जैसे एक उद्घोष करने वाला उद्घोष कर रहा है उसकी वाणी में बल है, सत्ता है, ऊर्जा है उसी ऊर्जा को ले करके अपने मानवीय जीवन को ऊँचा बनाता है। वह राष्ट्र को भी ऊँचा बनाता है। इसके पश्चात् मुनिवरो! देखो वह अपने में जलम् ब्रह्म वाचो देवाः बाह्य जगत् की प्रतिक्रिया को अपनेपन में ही धारण करता हुआ वह याग हो रहा है। जब वह याग हो रहा है तो राजा के विद्यालयों में यह घोषणा हो गई कि प्रत्येक विद्यालय में याग हो, प्रत्येक गृह में

याग हो, जिससे गृह में प्रत्येक प्रातःकाल में वेद ध्वनि प्रत्येक गृह के आङ्गन से वेद ध्वनि अन्तरिक्ष को गुञ्जायमान करने वाली हो, ध्वनित करने वाली हो और वह जो ध्वनित होने वाली शब्दम् ब्रह्मा। उसी ध्वनि से तो गृह के परमाणु पवित्र होंगे, राष्ट्र के परमाणु पवित्र होंगे, विद्यालय महान् बनेगा। वायुमण्डल पवित्र बनता चला जाएगा।

वेद का विचार बेटा! बहुत ऊँची एक घोषणा कर रहा है। वेद बहुत ऊँची घोषणा करता है इस सम्बन्ध में यह कहता है 'यज्ञं ब्रह्मा व्रतम् देवाः'। मानव का प्रत्येक क्रियाकलाप जितना भी संसार का है वह याग में परणित हो जाता है वह याग की धाराओं में रत्त हो जाता है। अग्न्याधान में जब अग्नि प्रदीप्त होती है, तो काष्ठों वाली अग्नि भी जागरूक हो जाती है। वह वायु में गति करने वाली जो धारा प्राण की है, वह भी अग्नि में मिश्रण हो, मिश्रित हो करके वही तो यजमान् के सत्य को द्यौ लोक में पहुँचाती है। वही तो होताजनों के शब्दों को द्यौ लोक में ले जाती है। **द्यौ क्या है?** जहाँ मुनिवरो! देखो प्रकाश है, अनुपमता है, महानता है, पवित्रता है, ओजस्वता है वही तो मानवीयता को ऊँचा बनाता है। तो विचार क्या राजा अश्वपति प्रातःकालीन राष्ट्र में भ्रमण कर रहे हैं, विद्यालयों में भ्रमण कर रहे हैं आचार्यजन अपनी आचार-सँहिता में निहित हैं, ब्रह्मचारियों के मध्य में हैं, याग हो रहा है, प्राणों की प्रतिक्रिया का एक अनूठा अभ्यास कराया जा रहा है, जिससे प्राणसूत्र में पिरोया हुआ है। प्रत्येक परमाणु प्राणसूत्र में पिरोया हुआ है।

मुनिवरो! देखो राजा अश्वपति ने जब विद्यालय में यह घोषणा की तो वैज्ञानिकों के मध्य में पहुँची। वैज्ञानिक जिस समय यन्त्रों का निर्माण कर रहे थे, अणु और परमाणुओं को एकत्रित कर रहे थे, जहाँ उसमें से जिस भी परमाणु का ओजस्वी परमाणु का विभक्त करने वाले बनें, तब उसमें से एक महान् अपार शक्ति का जन्म हुआ। उस जन्म

शक्ति से कुछ अशुद्धियाँ प्राणवर्द्धक और प्राणनाशक दोनों प्रकार की ऊर्जा का जन्म हुआ, ऊर्जा के जन्म होते ही राजा ने कहा, हे वैज्ञानिकों यह क्या हो रहा है? उन्होंने कहा प्रभु हम नहीं जान पाए हैं, उन्होंने कहा इसके ऊपर अनुसन्धान करो। तो वैज्ञानिक अनुसन्धान के लिए तत्पर हो गए। तो अनुसन्धान में यह जाना वैज्ञानिकों ने इस परमाणु को हम जिसका विभाजन करते हैं उसमें दोनों प्रकार की धाराओं का जन्म होता है। एक प्राणनाशक है, एक प्राणवर्द्धक है। दोनों प्रकार के परमाणुओं का जन्म होता है, अब प्राणनाशक को कैसे समाप्त करें। क्योंकि वह वायुमण्डल को अपवित्र बनाएगी और प्राणवर्द्धक वायुमण्डल का शोधन करेगी। तो उन्होंने कहा प्रभु अब क्या करें? उन्होंने कहा तुम प्रातःकालीन याग की रचना करो। प्रातःकालीन तुम्हारे इस विद्यालय में विज्ञानशाला में एक यज्ञशाला होनी चाहिए, तुम्हारी आचार-सँहिता पवित्र होनी चाहिए। केवल विज्ञान के आङ्गन में न ले जाओ। तुम देखो तुम्हारी आचार-सँहिता पवित्र हो तो प्रातःकालीन याग करो। प्रातःकालीन देव पूजा करो और वह देवपूजा है, साकल्यों का सँगतिकरण करो। जैसे तुम परमाणुओं का सँगतिकरण करते हो, सँगतिकरण करके एक-दूसरे परमाणु का मिलान कर देते हो, जैसे-जैसे पृथ्वी के परमाणु अग्नि में प्रवेश करते हो, अग्नि के परमाणु ले करके जल के परमाणु को ले करके उससे सम्मिश्रण करते हो और उसमें वायु का पुट लगाते हो, तो उसमें एक नवीन ऊर्जा का जन्म होता है और उस नवीन ऊर्जा को ले करके उसका पुनः मन्थन करते हो, तो और सूक्ष्म बनाया जाता है। जब सूक्ष्म बना करके और नाना परमाणुओं को वायुमण्डल में लेकर के उस ऊर्जा से उनका मिलान करते हो, तो कहीं कुड़ी ऊर्जा बन करके उसका तुम यन्त्र निर्धारित करते हो। यन्त्रों का निर्माण करते हो, वही यन्त्र मानव को सूर्य की परिक्रमा करा रहा है, कोई चन्द्रमा की परिक्रमा कर रहा है। कोई लोक-लोकान्तरों में रत्त हो रहा है।

विचार आता रहता है उसी ऊर्जा को देखो तुम ब्रह्मवाचाः, तो उस ऊर्जा को पवित्र बनाने के लिए तुम्हें याग की प्रतिभा में रत्त होना होगा। राजा के इन वाक्यों को ऋषि-मुनियों ने, वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया कि हम प्रातःकालीन सुगन्ध करेंगे। नाना प्रकार के साकल्य उनके समीप थे। अनुसन्धान से यह प्रतीत हुआ कि बहुत-सी वनस्पतियाँ ऐसी हैं और **जो देखो गौ घृत है उसमें ऐसे परमाणु ऐसी मानो धाराओं का जन्म होता है जो अशुद्ध परमाणुओं को निगलते रहते हैं,** जो प्राणनाशक जो धाराएँ हैं उसको निगल जाते हैं और निगल करके जैसे सम्भवा रहे उसको निगल करके शुद्धीकरण कर देते हैं। वायुमण्डल पवित्र बन जाता है। तो वैज्ञानिकों को यह जब सिद्ध हुआ तो वैज्ञानिकों ने प्रातःकालीन मिष्ठान और गौ घृतम् देखो श्रद्धामयी घृत को ले करके, उन्होंने कुछ औषधियों को एकत्रित करके उनका याग करते थे। प्रातःकालीन याग होता उसके पश्चात् विज्ञानशाला में अनुसन्धान होता। केवल ब्रह्म महाराज अश्वपति के यहाँ ही नहीं था, यह महर्षि भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में भी प्रायः ऐसा होता रहता था। महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ भी मुनिवरो! देखो इस प्रकार का अन्वेषण, अनुसन्धान विचारणीय था। उनकी सभाओं में भी एक विचारणीय प्रश्न बना हुआ था। परन्तु उनके यहाँ एक यज्ञशाला में नाना यन्त्र और उन यन्त्रों में भी एक अमूल्य धारा इस प्रकार की थी कि इसको जान करके मानव का हृदय एक घृत बन जाता था।

मुझे स्मरण आता रहता है वही विज्ञानशाला का अनुसरण करते, राजा अश्वपति के राष्ट्र में हुआ और उसके राष्ट्र में उसकी प्रतिभा ऐसी विचित्र बनी इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण हुआ। शब्द चित्रावली आभा में रत्त रहा, उसमें ओत-प्रोत रहती। मैं विशेष विवेचना में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। मैं विज्ञान के युग में तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार केवल यह कि राजा अश्वपति के राष्ट्र में आचार-सँहिता के ऊपर मैं अपने विचारार्थ दे रहा था। उनकी आचार-सँहिता क्रियाकलाप

में विचित्र थी। आज विद्यालयों को ऊँचा बनाना है, तो विद्यालयों में आचार-सँहिता होनी चाहिए और भिन्न-भिन्न प्रकार के याग होने चाहिएँ। सबसे प्रथम विचारों का याग हो देखो आचार्य विचार रखें, ब्रह्मचारियों को ले करके विचारों का याग करने वाले हों। विचार कैसे हों? उसकी वाणी का पुनः शोधन होना चाहिए। उसकी वाणी में पवित्रता होनी चाहिए और वही पवित्रता उसके मानवीयता को ऊँचा बनाती है।

भगवान् राम की घोषणा

आज मैं विशेष विवेचना में तो तुम्हें ले जाने नहीं आया हूँ। विचार केवल यह देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक आभा में आचार पवित्र हो। जैसा मुझे स्मरण आता रहता है त्रेता के काल का राष्ट्र और उनकी प्रतिभा भगवान् राम जब याग करते थे प्रातःकालीन, तो यह घोषणा करते थे, उनकी यह घोषणा होती थी राष्ट्र के कर्मचारियों से कि प्रत्येक गृह से वेद की सुगन्धि होनी चाहिए। अग्नि में आहुति देने के शब्द होने चाहिएँ। वेद के मन्त्रों की ध्वनि होनी चाहिए, जिससे वायुमण्डल और गृह दोनों पवित्र बन जाएँ और पवित्र बन करके मानव समाज सत्यता के आङ्गन में प्रवेश करके अपने को ऊँचा बनाता रहे। तो मुनिवरो! देखो यह प्रातःकालीन देवयाग प्रत्येक मानव के गृह में होते रहते थे। एक समय मुझे स्मरण है जब भगवान् राम का राष्ट्र पनप रहा था और अयोध्या में इस प्रकार की अयोध्या का निर्माण था जैसे मानव का शरीर है, अष्ट चक्र और नौ द्वारों वाली अयोध्यापुरी कहलाती थी। उसमें अष्ट चक्र थे और नौ द्वार थे, जैसे मानव के शरीर में अष्ट चक्र और नौ द्वार हैं इसी प्रकार अयोध्या का निर्माण किसी काल में भगवान् मनु ने किया था। भगवान् मनु ने अयोध्या को अनेकों वृत किया था, उसको अपने में निर्माणित किया था। महाराजा अश्वपति ने भी अयोध्या राष्ट्र में ही अपनी राष्ट्रीयता का पालन किया है।

परन्तु विचार क्या? भगवान् राम के समीप कुछ ऋषि-मुनि पहुँचे तो जब ऋषि-मुनि राजा भगवान् राम के समीप पहुँचे तो उन्होंने कहा प्रभु आओ, आप तो वेद के मर्म को जानने वाले हो, बुद्धिजीवी हो, चलो आज हम अयोध्या राष्ट्र में भ्रमण करेंगे। हमारे राष्ट्र में प्रातःकालीन वेद-ध्वनियाँ आती हैं या नहीं आतीं, जैसे हम अपने राष्ट्र में अपने गृह में वेद-ध्वनि के द्वारा सुगन्धित करते हैं, ऐसे ही मैं अपने राष्ट्र को जानना चाहता हूँ। तो ऋषिवर कुछ ऋषि और भगवान् राम दोनों ने अयोध्या राष्ट्र में भ्रमण करना प्रारम्भ किया। बेटा! देखो अयोध्या नगरी में जब भ्रमण किया तो प्रत्येक गृह से प्रातःकालीन सूर्य उदय होने से पूर्व ध्वनियाँ आ रही हैं और सुगन्धि आ रही है प्रत्येक गृह से। भगवान् राम बड़े प्रसन्न हुए और प्रसन्न चित्त हो करके ऋषियों से बोले कि प्रभु! यह जो तुम हमें नाना शिक्षा देते रहते, शिक्षा का यह परिणाम है। देखो सर्वत्र राष्ट्र में नगरी में भ्रमण किया; उपनगरों में पहुँचे उपनगरों में भी सुगन्धि आ रही है। वनों में पहुँचे जहाँ मानव विद्यमान है वहाँ भी याग कर रहा है, कोई जल से याग कर रहा है, कोई सुगन्धि से कर रहा है। जल से कैसे याग होता है?

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज एक समय अपनी स्थली पर विद्यमान थे। उनसे ब्रह्मचारियों ने कहा प्रभु! हम याग करना चाहते हैं, परन्तु याग में यदि समिधा न हो, घृत न हो तो हम क्या करें? उन्होंने कहा समिधा न हो तो कोई बात नहीं, अग्नि में अप्रतम् देखो अग्नि भी न हो तो उन्होंने साकल्य से आहुति दी। उन्होंने कहा साकल्य को देखो वह पृथ्वी में अर्पित कर दो, उन्होंने कहा साकल्य भी न हो, उन्होंने कहा कि मन्त्रों के द्वारा याग करो, मन्त्रों से वह जल को लो और जल से परोक्षण करके प्रत्येक आहुति स्वाहा की दो। परन्तु देखो जल से भी परोक्षण किया जाता है। उन्होंने कहा प्रभु यदि यह जल भी न हो, जल का अभाव हो, उन्होंने कहा तो मन से आहुति दो। मानो उद्घोष करो मन्त्रों का, आहुति देना प्रारम्भ करो। उन्होंने कहा

प्रभु यह आलस्य प्रहे ब्रह्मा वास्तव में तुम्हारा वाक् यथार्थ है मन्त्रों के द्वारा ध्वनि होनी चाहिए, क्योंकि देखो जहाँ अग्नि होत्र किया जाता है देवपूजा के रूप में यदि वह मानव प्रातःकालीन वेद मन्त्रों का उद्घोष करता है तो वाणी जितनी पवित्र होगी, जैसे वाणी पवित्र है और वाणी पवित्र वाला उद्घोष कर रहा है, तो वह वायुमण्डल पवित्र बन रहा है। यदि वह अग्नि में आहुति दे रहा है तो और भी महानता बन रही है। जितनी भी उसमें प्रतियाँ बनती रहेंगी उतना ही वह महान् क्रिया रूपों में रत्त होता रहेगा। वेद का ऋषि कहता है याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के वाक्य उद्धृत करते हुए भगवान् राम ने कहा कि ऐसा भगवन् ऋषियों ने वर्णन किया है। तुम्हारी क्या विचारधारा है? उन्होंने कहा बहुत प्रियतम हम इसको स्वीकार करते हैं।

पवित्र आचार-सँहिता का निर्माण

विचार-विनिमय क्या? मानव को अपने विचारों को इतना पवित्र बना करके अपनी आचार-सँहिता इतनी महान् बनानी चाहिए जिससे राष्ट्र पवित्र बन करके राजा उसकी प्रतिक्रिया का निर्माण करने वाला हो। अश्वपति ने जब विद्यालयों में यह घोष करा दिया, नगरियों में घोष करा दिया कि मेरे राष्ट्र में याग होने चाहिएँ। तो महाराजा अश्वपति और महामन्त्री पुरोहित को ले करके राष्ट्र का भ्रमण कर रहे थे। विद्यालयों में प्रातःकालीन, विद्यालयों में ध्वनियाँ हो रही हैं, वेद-ध्वनि हो रही है, उद्गीत गाये जा रहे हैं, ब्रह्म का चिन्तन हो रहा है। जो उपनगरों में पहुँचे वहाँ भी प्रत्येक गृह में प्रायः ऐसा ही हो रहा था। तो राजा अश्वपति ने प्रत्येक उपनगरियों में एक पुरोहित को निर्वाचित किया और उस पुरोहित का यही कार्य था कि वह प्रत्येक गृह में देखो सुगन्धि आनी चाहिए किसी भी रूप में हो परन्तु वह सुगन्धि विचारों के रूप में हो, प्रीति के रूप में हो। यह महाराजा अश्वपति ने घोष किया। राजाओं के विचारों में जब इस प्रकार की प्रतिभा बन जाती

है तो राष्ट्र पवित्र बन जाता है। यह जो दूषित वायुमण्डल हो रहा है, यह जो दूषित ऊष्ण हो रहा है, यह नहीं रह सकेगा किसी भी काल में और जब तक यहाँ नाना प्रकार के सँघर्ष करता रहेगा, एक-दूसरे में विवाद बना रहेगा, एक-दूसरे में सँघर्ष बना रहेगा, एक-दूसरे के विचार क्रोधमयी बने रहेंगे, ईर्ष्या और घृणा में युक्त रहेंगे, यह वायुमण्डल कदापि भी पवित्र नहीं बन सकता।

'ब्रह्मा वाचप प्रहे लोकाम्' मैं बहुत उदाहरण देने के लिए चल पड़ा हूँ परन्तु इतना समय तो है नहीं। एक और दिए देता हूँ कि महाराजा शुकेतुकातुक राजा थे, वह शुकेतुकातुक राजा लङ्का के राजा रावण से एक हजार प्रणाली के, प्रणाली के पूर्व सुकेतु राजा थे और राजा के राष्ट्र में अशान्ति आ गई और सुकेतु राजा के राष्ट्र में अशान्ति क्यों आई? राजा न रह करके, राजा तो थे ही परन्तु उनकी आचार-सँहिता भ्रष्ट हो गई थी, परादेवी गामी बन गए। जब गमन करने लगे, सुरा पान करने लगे 'मदम् ब्रह्मः' दूसरे प्राणियों के गर्भ को पान करने लगे तो प्रजा उसका अनुसरण करने लगी। जब प्रजा में इस प्रकार की धाराओं का जन्म होने लगा तो राजा के राष्ट्र में अशांन्ति आ गई, दृव्य की बलवती हो गई और दृव्य के बलवती होने पर उसमें सामान्यता न रह करके अशान्ति का उद्घोष हो गया। जब अशान्ति बलवती बन गई, अशान्ति आ गई, उसका मूल कारण क्या कि एक दूसरा प्राणी स्वार्थ की परिता में आ करके एक-दूसरे प्राणी को हनने करने लगा। जब एक-दूसरे प्राणी को हनन करने लगा, अज्ञानता आ गई, अज्ञानता के मूल में रूढ़िवाद आ गया। धर्म के नामों पर नाना प्रकार का रूढ़िवाद बन गया, तो राजा ही अशान्ति का मूल कारण बन गया। राजा ही अशान्ति में परणित हो गया। बहुत समय हो गया जब प्रणाली ब्रहे आकृतियों में बन गई तो कुछ बुद्धिमान उनके द्वार आए। उन्होंने कहा सुकेतु राजा तेरा राष्ट्र तो अशान्त बन गया है। मैं नहीं जानता यह क्या कारण बन गया है, यह नाना प्रकार की रूढ़ियाँ बन गई हैं, धर्म

के नामों पर रूढ़ियाँ बन गई हैं और रूढ़ियाँ बन करके एक-दूसरा प्राणी-प्राणी को नष्ट कर रहा है। यह वायुमण्डल अपवित्र बन गया है। इस वायुमण्डल में देखो दूषित वायुमण्डल बन गया है। विज्ञान का तेरे राष्ट्र में दुरुपयोग हो रहा है, मेरी पुत्रियो के अश्लील चित्रों के चित्रण हो करके देखो मानव प्रसन्न हो रहा है, इस प्रकार की धारा अनेक रूपों में बन रही है। हे राजन्! ऐसा प्रतीत हो रहा है तुम्हारा राष्ट्र अब नष्ट होने वाला है। जब ऋषि-मुनियों ने, बुद्धिजीवियों ने यह वाक् राजा को कहा तो राजा कहाँ श्रवण करता? राजा के मस्तिष्क में तो स्वार्थ-परिता का एक गति हो रहा था, परन्तु बुद्धिमानों ने विचारा क्या करें? तो बुद्धिमानों ने एक ब्रह्म क्रान्ति प्रारम्भ की, मानव कुछ समाज को अपनाया। समाज को अपना करके मृत्यु को प्राप्त हो गया, उनका पुत्र यह जानता था, सुकेतु के पुत्र मान्धाता हुआ और मान्धाता देखो महान् बना, वह याज्ञिक बन करके अपने राष्ट्र को पुनः से उसने ऊँचा बनाया। तो इस प्रकार विचार आते रहते हैं कि जब राजा के राष्ट्रीयता, आचार-सँहिता जब भ्रष्ट हो जाती है तो यह नाना प्रकार के विचारों में द्वेष, ईर्ष्या की अग्नि जागरूक हो जाती है। वही अग्नि रूढ़िवाद के आसनों में पनपती रही है और वही राष्ट्र के विनाश का कारण बन जाती है। एक-दूसरे के रक्तों को पान करने लगता है। जब मैं इन विचारों को ले करके गति करता हूँ तो मेरा हृदय दुःखित होता है।

परन्तु आज मैं विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। महाराजा अश्वपति की मैं यह चर्चा कर रहा था कि उसने अपने राष्ट्र में प्रत्येक गृह में वेदरूपी प्रकाश को ज्ञान को अपनाने के लिए उद्घोष किया। आज का विचार अब यह समाप्त होने जा रहा है। **आज के विचारों का अभिप्राय क्या है कि प्रत्येक मानव को अपनी आचार-सँहिता को बनाना चाहिए, विचित्र बन करके रहना चाहिए।** राग और द्वेषों से रहित हो करके, हिंसा से रहित हो करके अहिंसा में अपने विचारों को जब तक नहीं बनाओगे, तुम्हारा गृह पवित्र नहीं बनेगा, गृह ऊँचा नहीं

बनेगा। तो ऊर्जा सार्थक ऊर्जा का जन्म नहीं होगा और जब ऊर्जा का जन्म नहीं होगा तो बाह्य जगत् को भी ऊँचा नहीं बना सकेगा।

यह है बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूँगा। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण-गान गाते हुए संसार सागर से पार हो जाए। यह है आज का वाक्। आज का वाक् अब हमारा समाप्त होने जा रहा है, शेष चर्चाएँ हम कल प्रकट करेंगे। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों को पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी–अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव–आनन्द रहो!

दिनाँक : 21 सितम्बर, 1985
समय : रात्रि 8 बजे
स्थान : ई-31 लाजपत नगर-3
नई-दिल्ली

आवश्यक सूचना

सभी वार्षिक सदस्यों को सूचित किया जाता है कि जिन सदस्यों ने अभी तक वार्षिक सदस्यता की राशि जमा नहीं की है वह कृपया करके मनीआर्डर द्वारा समिति के कार्यालय में या प्रकाशन मंत्री को वार्षिक सदस्यता की राशि भेज दें जिससे कि पत्रिका निरंतर प्रेषित होती रहे।

।। ओ३म् ।।

यम-नचिकेता सम्वाद
(मोक्ष की पगडण्डी)

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण-गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद वाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का वर्णन किया जाता है, क्योंकि वह परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञानमयी स्वरूप माने गये हैं। **जितना भी ज्ञान है अथवा विज्ञान है वेद की प्रतिभा का स्रोत माना गया है,** क्योंकि सृष्टि के प्रारम्भ से लेकर के वर्तमान के काल तक नाना वैज्ञानिक हुए हैं, परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा सीमा से रहित हैं; वह सीमा में आने वाले नहीं हैं, इसलिए उसका ज्ञान और विज्ञान नितान्त है। एक-एक परमाणु में, एक-एक अणु में ब्रह्माण्ड का दर्शन होता है। इस सृष्टि के गर्भस्थल में नाना प्रकार की तरङ्गों में उस परमपिता परमात्मा की महती निहित रहती है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक मानव अनुसन्धान करता रहा है और विचारता रहा है कि मैं विज्ञान की पराकाष्ठा पर जाने का प्रयास करूँ और पराकाष्ठा पर मेरी निहितता होनी चाहिए। परन्तु जब वह ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ता रहा, तो मानव अन्त में मौन हो गया है, इन्द्रियों का और चिन्तन का विषय नहीं रहा हैं तो इसलिए उस परमपिता परमात्मा का जो ज्ञान है अथवा विज्ञान है वह इतना नितान्त

है कि अनुसन्धानवेत्ता अनुसन्धान करता रहता है परन्तु अन्तिम चरण में वह मौन हो जाता है, गम्भीर मुद्रा में परणित हो जाता है।

दो प्रकार का विज्ञान

इसी प्रकार वेद मन्त्र यह कह रहा है कि उस परमपिता की महती और उसके ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मानव को विचार-विनिमय करना चाहिए, क्योंकि दो प्रकार के विज्ञान हमारे यहाँ परम्परागतों से ही मानव के मस्तिष्कों में भासित रहता है। एक भौतिक विज्ञान है तो दूसरा आध्यात्मिक मार्ग है, दोनों प्रकार का विज्ञान अपने में अनूठा है, अपने में महान् है। एक-दूसरे विज्ञान के ऊपर अन्वेषण करना जब प्रारम्भ करता है, तो एक तो यह चाहता है कि भौतिक विज्ञान में इस संसार में मेरी प्रतिष्ठा हो और मैं विज्ञान के ऊर्ध्वा अणु में प्रवेश कर जाऊँ। परन्तु दूसरा वैज्ञानिक कहता है कि मैं मृत्युञ्जय बन जाऊँ और मेरी मृत्यु न हो, मुझे संसार में भिन्न-भिन्न प्रकार की विडम्बना नहीं होनी चाहिये। परन्तु दोनों प्रकार के विज्ञान में अपनी-अपनी भिन्नता है, अपने-अपने विचारों में भिन्नता लिए हुए रहते हैं। एक वैज्ञानिक राष्ट्र-पाठ से जुड़ा हुआ है, अणु और परमाणु में वह रत्त रहने वाला है। एक आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता इस भौतिकवाद के मार्ग से होता हुआ, इन्द्रियों के तथ्यों को जानता हुआ, वह आध्यात्मिकवाद के क्षेत्र को विजय कर लेता है और प्रभु के राष्ट्र में चला जाता है।

अध्यात्मिक मार्ग

आज मैं उसी अनूठे विचारों में तुम्हें ले जाना चाहता हूँ जो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करना चाहते हैं। जो मानव अपने में आध्यात्मिकवादी बनना चाहते हैं, तो वह कैसे बनते हैं? आओ मेरे प्यारे! तुम्हें मैं उस आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ नाना ऋषि-मुनियों का विचार, ब्रह्मवेत्ताओं का विचार जो मृत्युञ्जय बन गये हैं और जो

मृत्युञ्जय की पिपासा में लगे हुए हैं। परन्तु आज मैं तुम्हें उस आसन पर ले जाना चाहता हूँ जहाँ मुनिवरो! महर्षि उद्दालक गोत्रीय ब्रह्मचारी नचिकेता ने आचार्य मृत्यु के गृह में प्रवेश किया; जब गृह में प्रवेश किया तो नाना ऋषि-मुनियों ने उन्हें मृत्युञ्जय बनने की नाना प्रकार की उड़ानें अपना-अपना विचार व्यक्त किया। अन्तिम चरण वह यमाचार्य के गृह में हुए, उनका नामोकरण यमाचार्य था परन्तु जब आध्यात्मिकवाद में मृत्यु को विजय कर लिया, तो वह मृत्यु आचार्य कहलाने लगे। जब वह ब्रह्मचारी गृह में प्रवेश हुए, द्वार पर पहुँचे तो मुनिवरो! मृत्यु आचार्य पत्नी ने कहा प्रभु आइए, कुछ अन्न और जल का पान कीजिए। मुनिवरो! उद्दालक गोत्रीय पुत्र नचिकेता ने कहा हे मातेश्वरी! मैं जब तक भोजन नहीं करूँगा जब तक मुझे आचार्य मृत्यु के दर्शन नहीं होंगे। मैं अपने पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए आचार्य के समीप आ पहुँचा हूँ, पत्नि व्याकुल हो गई है। उन्होंने न्योदा में से एक मन्त्र का अध्ययन किया।

वह न्योदामयी मन्त्रों के ऊपर विचार-विनिमय करने लगे। वह वेद मन्त्र कह रहा था ''विप्रजाम् भविते ब्रह्म लोका वस्तुताः ब्रह्मचरिष्यामि गतो वाचम् भवि'' उन्होंने न्योदा में से एक वेद मन्त्र का उच्चारण करके अपने में चिन्तन करने लगे और विचारने लगे कि वेद मन्त्र यह कहता है कि यह गृह-आश्रम में एक ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता ब्रह्म की जिज्ञासा वाला अन्न जल पीड़ित रह जाए, तो मानव की एक मूल्यवान उस गृह के पुण्यों को ले जाता है और वह अपने पाप-कर्मों को त्याग देता है। यह पाप-कर्म हैं, मेरा गृह तो अशुद्ध होने जा रहा है। वह व्याकुल हो गई, प्रभु से याचना करने लगीं, हे प्रभु! मृत्यु को मेरे समीप ला दीजिए, मेरा गृह पुण्यवान बना रहे, उज्ज्वल बना रहे। **वह पत्नी प्रातःकालीन अग्निहोत्र जब करती तो अग्नि के समीप कहती** कि हे अग्नि! तू संसार को अपने ही में धारण कर लेती है, हे अग्नि! तू तेजोमयी है, हे अग्नि! तू उद्धारक है, हे अग्नि! तू

पतितपावन है, साकल्य को अपने में ले करके तू देवताओं का दूत बन जाती है, तू देवताओं के समीप निहित हो जाती है। आ तू मेरे मानव में भी अन्तरात्मा की इस वाणी को स्वीकार कर। मन्त्रों का उच्चारण कर रही है, देवताओं का आह्वान हो रहा है। परन्तु देखो तीन रात्रि हो गई, तीन रात्रि वह यही प्रार्थना करती रही, हे प्रभु! जब तीसरा दिवस आया तो प्रातःकालीन यमाचार्य, मृत्यु आचार्य अपने गृह में उन्होंने वास किया, दृष्टिपात करते पद से व्याकुल हो गए और यह कहा कि हे प्रभु! हमारे द्वार पर एक ब्रह्मवेता ब्रह्मचारी विद्यमान है और यह अन्नजल से पीड़ित है। तीन रात्रि और तीन दिवस हो गए, परन्तु उसने कोई अन्न-जल का पान नहीं किया है। तो भगवन्! उसे किसी प्रकार अन्न-जल का पान कराइए जिससे हम पुण्यवान बने रहें, हमारा गृह पुण्यवान बना रहे। उन्होंने कहा, बहुत प्रियतम् देवी, मैं प्रयत्नशील हूँ। उन्होंने कहा प्रभु! आप क्या करेंगे इसमें? उन्होंने कहा कि उसकी इच्छा होगी ब्रह्मचारी की मैं उन्हें प्रदान करूँगा। उनकी इच्छा पूर्ण करना ही मेरा स्वधर्म है। वह पत्नी के उद्‌गार श्रवण करके ही यमाचार्य बालक नचिकेता के द्वार पर पहुँचे, तो नचिकेता ने नम्र और श्रद्धाहित हो करके ऋषि के चरणों को स्पर्श किया, चरणों की वन्दना की।

पितरों का पूजन

यमाचार्य ने कहा हे बालक! हे ब्रह्मचारी! मैं तुम्हें तीन वर देता हूँ और तीन वरों में जो तुम्हारी इच्छा हो वह स्वीकार करो। उन्होंने कहा बहुत प्रिय भगवन्! उन्होंने कहा मैं सबसे प्रथम उस वर को चाहता हूँ जिससे मेरे पिता ने सर्वत्र द्रव्य देवताओं को हुत कर दिया, वह **मेरे पिता की अभिलाषा पूर्ण हो**, क्योंकि उन्होंने नाना ऋषियों के द्वारा याग किया और याग करके उन्होंने मुझे भी उन्होंने मृत्यु को प्रदान कर दिया है। वह त्याग और तपस्या में परणित हो करके ममता को त्याग करके, वह द्रव्य को त्याग करके, देखो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करना

चाहते थे, वह मोक्ष में प्रवेश करना चाहते थे। हे प्रभु! हे आचार्यजन! वह मेरे पिता की इच्छा पूर्ण हो क्योंकि मैं ब्रह्मचारी उद्दालक गोत्रीय हूँ, और उद्दालक गोत्र में पितर-भक्ति एक महान् रही है। क्योंकि यदि मानव पितर-भक्त होता है, अपने पिताओं की आज्ञा का पालन करता है, वह महान् बना करता है, वेद का मन्त्र और न्योदामयी उच्चारण कर रही है कि हमें पितरों का भक्त बन जाना चाहिए। **पितर कौन हैं?** बालक नचिकेता कहता है कि पितर हमारे यहाँ सर्वप्रथम पिता है, माता है, आचार्य है। यह हमारे चैतन्य देवता कहलाते हैं चैतन्य पितर कहलाते हैं। पितरों का अभिप्राय यह है जो अपने ब्रह्मचारियों को अपने गृहों में स्थलियों में रत्त रहने वाले, उसको महान् दृष्टिपात करना चाहिए कि वह ब्रह्मचारी महान् बनें और उनका नामोकरण ऊर्ध्वा में प्रिय हो जाए, गतिशील बन जाए, तो उनके विचारों में यह विशेषता रहती। मेरी प्यारी माता सदैव पुत्र के लिए यह चाहती है कि मेरा पुत्र महान् बन जाए, मेरे पुत्र में एक महानता आ जाए और मेरा पुत्र आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों को अपने में सिमेटने वाला हो। परन्तु देखो पिता भी यही चाहता है कि यह मेरी इच्छा पूर्ण करना चाहता है। तो जाओ तुम मृत्यु को चले जाओ मृत्यु के गर्भ में, यह है क्या? तुम अज्ञान को त्याग और प्रकाश में चले जाओ। तो प्रभु जो यह कामना करता है मेरा पितर मुझे प्रकाश में, प्रकाश के लिए प्रेरणा दे रहा है और स्वतः मोक्ष में जाना चाहता है, तो मेरा भी वही पितर मेरे जीवन का कल्याण करने वाला है। आचार्यकुल में जब ब्रह्मचारी अध्ययन करता है, तो आचार्य की यह कामना होती है कि मेरा ब्रह्मचारी महान् होना चाहिए मेरे ब्रह्मचारी में वह चक्षु में अनुसन्धानी, प्राण में अनुसन्धानी, श्रोत्रों में अनुसन्धानी, वह अनुसन्धान करता हुआ वह कहता है, हे ब्रह्मचारी! तू इन्द्रियों के विषय को मुझे प्रदान कर, जिससे मैं पवित्र और महान् बन जाऊँ। मैं महान् बनूँगा, तो ब्रह्मचारी महान् बनेगा। देखो वह कामना करता है। नचिकेता कहता

है, भगवन्! यह पितर क्या है? मेरी इच्छा यह है कि मेरे ये जो पितरजन हैं, उनकी आशा अभिलाषा पूर्ण हो। उन्होंने कहा प्रभु और जड़वत् देवता हैं, जो जड़ देवता है उनकी भी मेरे हृदय में यह कामना है कि वे भी भासिते रहें जैसे सूर्य हमारा पितर है और प्रकाश देता है, चन्द्रमा हमारा पितर है वह अमृत देता है, अग्नि हमारा पितर है वह ऊष्ण बनाने लगती है वह तेजोमयी बनाती है, वह तेजोमयी बनाती रहती है, आपो है यह शीतल बनाता है, वायु है यह प्राण देता है, अन्तरिक्ष हमें अवकाश देता है। तो अपने-अपने में वह पितर हैं, यह कैसे अनुपम पितर हैं यह जड़ पितर हैं, परन्तु यह पितर कैसे हैं जो हमें देते-देते ही हैं। अमृत देने वाला चन्द्रमा है कहाँ-कहाँ से बटोर करके वह चन्द्रमा अपने में अमृत लाकर हमें प्रदान करता है। वाह रे मेरे प्रभु! तू कितना विज्ञानमयी है। बालक नचिकेता ब्रह्मचारी कहता है यमाचार्य से, हे प्रभु! मेरे जो पितरजन हैं वह चन्द्रमा अमृत लाता है, समुद्रों में जाता है, समुद्रों से परमाणुओं को लेता है, उन्हें अन्तरिक्ष में पहुँचाता है, अपनी छटा कान्ति के द्वारा वह प्रदान करता है। वह जो भासिता रहता है सूर्य, वह सूर्य प्रकाश को देने वाला है, वह प्रकाश देता है। परन्तु देखो इसी प्रकार यह आपोमयी ज्योति है यह अमृतमयी प्राण में समाहित रहती है। 'प्राणोऽवृहे वाचन्नमं ब्रह्माः' यह प्राणों से युक्त हो करके हमें शीलत बनाता है, जीवन प्रदान कर देता है। इसी प्रकार अग्नि है, अग्नि ऊष्ण बनाने लगती है, यह तेजोमयी बनाती है। जो वह अपने वायुमण्डल को पवित्र अपनी आभा में नियुक्त बनाती रहती है, इसी प्रकार वायु प्राण देता है और अन्तरिक्ष अवकाश देता है। तो यह भगवन्! मेरे जड़ पितर है, मैं पितरों के सम्बन्ध में तो इतना नहीं जानता हूँ। परन्तु मेरी इच्छा यह है कि मैं पितरों के लिए आया हूँ, प्रभु मेरे पितरों की इच्छा पूर्ण हो।

मेरे प्यारे बालक नचिकेता के वाक्यों का पान करके, उसके मुखारबिन्दु को एक ही नेत्रों से वह दृष्टिपात करते रहे। उन्होंने सोचा

कि यह ब्रह्मचारी तो बड़ा विचित्र है जो अपने सर्वत्र पितरों की इच्छा को पूर्ण करना चाहता है और कहा, हे ब्रह्मचारी! तथास्तु। प्रथम वचन स्वीकार कर दिया।

स्वर्ग की विवेचना

द्वितीय वचन रह गया, द्वितीय वचन में उन्होंने कहा भगवन्! मैं यह जानना चाहता हूँ कि **स्वर्ग किसे कहते हैं** मैं स्वर्ग के सम्बन्ध में अपनी विवेचना चाहता हूँ, मैं जानना चाहता हूँ कि स्वर्ग क्या है? तो बालक नचिकेता से कहा, हे ब्रह्मचारी! अग्नि की पूजा करने का नाम ही स्वर्ग कहलाता है। अब नचिकेता को यमाचार्य ने कहा हे नचिकेता! मैं उच्चारण करता जाऊँगा तुम श्रवण करते जाओ और जहाँ तुम्हारी शँका हो वहाँ निवारण करते चले जाओ। उन्होंने कहा, तो **स्वर्ग कहते हैं अग्नि की पूजा को।** अब अग्नि हमारे यहाँ कितने प्रकार की है जिसका हम पूजन करें। एक अग्नि वह है जिस अग्नि में मेरी प्यारी माता भोजनालय को तपा रही है, वह अग्निवृत्ता है, द्वितीय अग्नि का नाम गार्हपत्य नाम की अग्नि कहते हैं। जिस गार्हपत्य नाम की अग्नि में ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में तपा करता है, विद्यालय में ब्रह्मचारी तप रहा है, अपना क्रियाकलाप बना दिया है उसने स्वर्ग में जाने के लिए। प्रातःकालीन अपने आसन को त्याग देता है, जब तारामण्डलों की छटा अन्तरिक्ष में ओत-प्रोत रहती है। आसन को त्याग करके वह अपनी क्रियाओं से निवृत्त होता है, क्रियाओं से निवृत्त हो करके प्रातःकालीन यज्ञ की अग्नि में आहुतियों के द्वारा वह देवताओं का पूजन करता है, जिसे गार्हपत्य नाम की अग्नि कहते हैं। उस अग्नि का वह पूजन करता है, वह अग्नि कौन-सी है जो अग्नि ब्रह्मचर्य के रूप में मानव के शरीर में प्रवाह से गति कर रही है। वह ब्रह्मचारी उसे गार्हपत्य अग्नि स्वीकार करके उसका पूजन कर रहा है। मैंने तुम्हें बहुत पुरातनकाल में पूजन की चर्चाएँ की हैं **पूजा किसे कहते हैं?**

पूजा का अभिप्राय यह है कि हम उसको जानना चाहते है, उसको जान करके उसका सदुपयोग करना ही वह उसकी पूजा कहलाती है। वह हमारे शरीरों में जो अग्नि का प्रभाव हो रहा है, उस अग्नि का सदुपयोग करना, हे ब्रह्मचारीजन! तू अग्नि विद्या का अध्ययन कर, वह विद्या को अध्ययन कर रहा है, वह अपने में अध्ययनशील बना हुआ है, अध्ययन कर रहा है कि इस वेद मन्त्र के ऊपर विचार-विनिमय करता हुआ अपने ध्रुवा में गति करता है, कहीं ऊर्ध्वा में गति कर रहा है, कही पुरुषार्थ प्रतिक्रिया में रत्त हो जाता है। विचार-विनिमय क्या? वह गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन कर रहा है, **गार्हपत्य नाम की अग्नि उसे कहते हैं जो ब्रह्मचारियों के हृदयों में सिमिट करके ब्रह्मचारी तेजस्वी बन रहा है और उसको प्राप्त होता हुआ ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ रहा है।** वह लोक-लोकान्तरों के लिए अपने में विचार-विनिमय करता रहता है। जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अध्ययन करते थे, तो वह अपने विचारों में ब्रह्मचारियों के विचारों का दोनों का समन्वय करते रहते थे, और उनका समन्वय करते हुए विचारते रहते ज्ञान और विज्ञान की धाराओं में रत्त रह करके, एक-एक अणु और परमाणु में गति करते हुए, ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ते रहते।

विचार-विनिमय क्या है? यमाचार्य ने कहा है नचिकेता सबसे प्रथम ब्रह्मचारी अपने स्वर्गलोक में चला जाता है। वह विद्या का अध्ययन करता, उसको क्रिया में रूप बनाना अपने में ब्रह्मवर्चोसी का पालन करना, उसका सदुपयोग करना, वह गार्हपत्य नाम की अग्नि के समीप जब ब्रह्मचारी चला जाता है, तो वह स्वर्ग में चला जाता है, उसका वही स्वर्ग है; आचार्य भी उसे मन ही मन में नत मस्तिष्क हो जाता है। ब्रह्मचारिष्यामि, ब्रह्मचर्य के दो ही शब्दों में उसकी प्रतिभा भासती रहती है, ब्रह्म और चर्य दो ही शब्द हैं, ब्रह्म कहते हैं परमपिता परमात्मा को और चर्य कहते हैं, प्रकृति को, दोनों का अनुसन्धान करना ही यह उसका कर्त्तव्य कहलाता है। प्रत्येक साँस की प्रत्येक गति जब

वह एक सूत्र में पिरो देता है, तो वह ब्रह्मचरिष्यामि बन जाता है। विद्या का अभिप्राय केवल यही है, विद्या के ऊपर हमारा अनूठा अनुसन्धान होना चाहिए। नचिकेता को यमाचार्य ने कहा कि हम जब पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा अध्ययन करते थे, तो एक समय हम विचार-विनिमय करते-करते इन न्योदामयी मन्त्रों का अध्ययन कर रहे थे और अध्ययन करते हमें एक वेद मन्त्र स्मरण आया था। वेद मन्त्र कहता था 'प्रमाणम् वृहे वाचन्नम्वृही वृताम् देवाः वाचन्नम् ब्रह्मवाचा मनाः' वेद का मन्त्र कहता था कि हम उस परमाणुवाद के क्षेत्र में, ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्रों में हम अपने को कैसे ऊँचा बनाएँ। तो मुनिवरो! जब आचार्य के समीप पहुँचे तो आचार्य ने हमें न्योदा में से मन्त्रों को उद्धृत करते हुए कहा कि 'सम्भूति ब्रह्म वाचा गृहे लोकाम् वाचन्नमम् ब्रह्म ही लोकवती' यही तो व्रत कहलाता है। उन्होंने पूज्यपाद गुरुओं ने यह वर्णन कराया कि यह जो अणुवाद है, परमाणुवाद है, इसी में ब्रह्माण्ड निहित रहता हैं इसी विद्या को जान करके मानव समाज और राजन्नम्वृही, समाज को ऊँचा बना करके, हम अपने ऊर्ध्वागति में ऊँची-ऊँची उड़ाने उड़ते रहते हैं। तो यह वाक् उन्होंने प्रकट कराया, इस वाक् का अध्ययन करते हुए तो हम तुम्हें यही उच्चारण कर रहे हैं, वही ब्रह्मचारी का स्वर्ग है, स्वर्ग किसे कहते हैं? जहाँ दुःखद की घटना न आएँ, परन्तु स्वर्ग उसे कहते हैं जहाँ कलह न रहे, जहाँ एक-दूसरे में कलह का वायुमण्डल बन जाता है वह नर्क का एक साँस बन जाता है, वह नारकीय गृह कहलाता है जिस गृह में जिस विद्यालय में एक-दूसरे के विचारों में मत हो जाता है एक-दूसरे के विचारों के विवाद की प्रवृत्ति बन जाती है, वह विद्यालय अपवित्र हो जाता है। हे ब्रह्मवाह वाचन्नमम् वृहे जिस राजा के राष्ट्र में विचारों में भिन्नता आ जाती है, राष्ट्र और प्रजा दोनों में एक-दूसरे को विरह होता रहता है, राष्ट्र नारकीय कहलाता है, यह समाज नारकीय है। इसलिए यमाचार्य ने कहा, नचिकेता! हमारा प्यारे आचार्य से सम्बन्धित रहना

चाहिए, दोनों का परस्पर विवाद न हो, परस्पर समन्वय हो, परस्पर एक विचारों में प्रश्नकर्ता उत्तर देने वाला है और वह दार्शनिक दर्शनों से गुथा हुआ हो, ज्ञान और विज्ञान से गुथा हुआ हो, तो इस प्रकार का तुम्हारा जो विद्यालय है यह स्वर्ग कहलाता है। प्रथम अग्नि का पूजन गार्हपत्य नाम की अग्नि कहलाती है, जिस अग्नि का हमें पूजन करना है और **तृतीय अग्नि का नाम हमारे यहाँ आहवनीय नाम की अग्नि कहलाती है** जिस अग्नि में ब्रह्मचारी, मानो तपा करता है। द्वितीय अग्नि का नाम मेरे प्यारे देखो गार्हपत्य नाम की अग्नि है, गार्हपत्य नाम की अग्नि क्या है? जहाँ बेटा! देखो माता-पिता जिस अग्नि में तपायमान रहते हैं, उस अग्नि का हमें पूजन करना हैं आज कोई भी मानव यह चाहता है कि मेरा गृह स्वर्ग बन जाए, मेरे गृह में स्वर्ग का वायुमण्डल बन जाए, तो माता-पिता अन्तरस्थली पर विद्यमान हो करके दर्शनों का विचार-विनिमय करें और प्रातःकालीन अग्निहोत्र जिसे गार्हपत्य नाम की अग्नि कहते हैं पूजन करें। अग्नि नाम कई रूपों में माना गया है, अग्नि काष्ठ में रहने वाली है यह भी अग्नि है, जो वाणी से उद्गार शब्दों का उद्गीत होता है इसका नाम भी अग्नि कहलाता है। अब माता-पिता अपने-अपने आचरणों से विशुद्ध होते हैं आचरण जिनके पवित्र होते हैं, उनके गृह मुनिवरो! देखो स्वर्ग बनते हैं और जिन गृहों में आचरणों की भिन्नता हो जाती है, आचरणों में दूषितवाद आ जाता है, वहाँ गार्हपत्य नाम की अग्नि शान्त हो जाती है। **अपने गृह को स्वर्ग बनाना है तो हमें अपने आचरण को इतना पवित्र बनाना चाहिए, अन्तरात्मा के अनुकूल बनाना चाहिए।** गृह में पति-पत्नी जब सुन्दर आचरण को करेंगे, माता-पिता बाल्य-बालिका अपने श्रवण करेंगे, अपने में अध्ययन करेंगे, तो उनके आचरणों से उनके आचरण भी पवित्र बन जाते हैं। उनकी प्रतिक्रियाएँ विचित्र बन जाती हैं। तो हे मातेश्वरी! हे मित्रो! आज तुम अपने आचरणों को पवित्र बनाओ, जिससे तुम्हारे गृह में नरक का वास न बन जाए, तुम नारकिक न बनो, तुम देवपुरी में अपना वास

करने वाले बनो। गृह को स्वर्ग बनाना है, तो गृह स्वर्ग उस काल में बनेगा, जब गार्हपत्य नाम की अग्नि का प्रकाश होगा, प्रकाश कैसे होता है? प्रातःकालीन मेरे वेद मन्त्रों का अध्ययन, ध्वनि होती रहे, गृह प्रातःकालीन ध्वनित होता रहे।

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! नाना ऋषि-मुनियों का जीवन, वह माता और पितर अपने में शिकामकेतु ऋषि हुए हैं उद्दालक गोत्र में। **शिकामकेतु ऋषि महाराज और उनकी पत्नी** प्रातःकालीन जब याग करते, तो याग कर्म में मानव दर्शनों का अध्ययन करते। विज्ञान की तरङ्गों में उड़ाने उड़ते रहते। तो बाल्य-बालिकाओं माता-पिता के आचरणों का अध्ययन करते, जब अध्ययन करते तो गृह स्वर्ग बन गया और गृह में तपस्वी जीवन बन गया और तपस्या चर हो करके गृह स्वर्ग बन गया। तो मैं आज तुम्हें गार्हपत्य नाम की अग्नि के पूजन के सम्बन्ध में कुछ विवेचना करना चाहता हूँ। महाराजा दिलीप जी जब अध्ययन करते थे, वे और उनकी पत्नी जब गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन करते तो राष्ट्र पवित्र बन गया। प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, वेदों का अध्ययन करना, ज्ञान की चर्चाएँ करना, प्रातःकालीन अग्निहोत्र करना, प्रकाश और सुगन्ध में अपने जीवन को ले जाना और दर्शनों का अध्ययन करना कि हमारा मानवीय कर्त्तव्य क्या है। अपने को जब तपायमान कर देता है, तो दूसरा प्राणी भी तपायमान हो जाता है। बाल्य-बालिका तपों में परणित हो जाते हैं, अथवा निश्चित हो जाते हैं। विचार विनिमय क्या? बेटा! देखो विशाखा वायुमण्डल केवल वाणी से प्रारम्भ होता है इसलिए वाणी में नम्रता के उद्गार होने चाहिएँ। जिससे बाल्य कहें कि मेरे माता-पिता बड़े प्रसन्न हैं। वह अपने में कितने उदार हैं, कितने उद्गीत गाने वाले हैं। मेरे पुत्रो! मदालसा जब वेदों का गान गाती थी, उसके बाल्य-बालिका प्रातःकालीन जब साम-गान गाती रहती, तो ब्रह्मचारी बालक उनके समीप विद्यमान हैं, माता के उद्गारों को श्रवण करके गृह को वह पवित्र बना रही हैं, गृह

में वायुमण्डल पवित्र बन रहा हैं। बाह्य जगत् और अन्तर्जगत दोनों ऊँचे बन रहे हैं। तो स्वर्ग की कल्पना करने वाला आचार्य कहता है, वेद मन्त्र कहता है कि हमारे यहाँ स्वर्ग होना चाहिए।

मुझे स्मरण है **भगवान् मनु** के यहाँ महाराजा अक्षु का जीवन, जब उनके साहित्य में प्रवेश करते हैं तो वह प्रातःकालीन वेद का अध्ययन करते हैं। समुद्रों के तटों पर विद्यमान हो करके उपासना करते हैं, राष्ट्र में प्रजा उनके अनुकूल बरतने लगी, इस प्रकार राष्ट्र पवित्र बन गया। जब तक मानव का आचरण, मानव की प्रतिभा ऊँची नहीं बनेगी, वह मानव यह कल्पना करे कि मैं स्वर्ग में चला जाऊँ यह असम्भव है। तो मैं विचार दे रहा हूँ कि बालक नचिकेता! **गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन करना यह हमारे यहाँ स्वर्ग कहलाता है।** मेरी प्यारी माता भोजनालय में भोजन का निर्माण कर रही है, परन्तु वेदों के मन्त्रों को उद्गीत रूप में गान गा रही है, परमपिता परमात्मा का स्मरण हो रहा है। तो वह माता के हृदयों की तरङ्गें, माता के हृदय की प्रतिभा, बाल्य का उस अन्न के द्वारा निर्माण हो रहा है। मुनिवरो! यह जो भगवन् परमपिता परमात्मा का अनुपम जगत् है, वह तरङ्गवादों का कहलाता है, यह तरङ्गवाद है, सर्वत्र तरङ्गों में निहित हो रहा है, जगत् यह तरङ्गवाद है, प्रत्येक विचार तरङ्गित हो रहे हैं, अपने में तरङ्गित होते अपने में आभा में नृत्य हो रहे हैं। तो मैं गार्हपत्य नाम की अग्नि का, अग्नि के सम्बन्ध में उद्गीत गा रहा हूँ। मुझे स्मरण है जब हम अपने पूज्यपाद गुरुओं के द्वारा अपने पितरों के द्वारा अपने में अध्ययन करते थे, तो माता लोरियों का पान कराती रहती और वह वेद मन्त्रों के उद्गीत गाती रहती, मानो संस्कार बनाती रहती उन्हीं संस्कारों के आधार पर मुनिवरो! मानव का जीवन मानवीय क्षेत्रों से उपरान्तता को प्राप्त हो करके, मुनि की कोटि में चला जाता है। वह ऋषि-मुनियों की प्रतिभा में चला जाता है।

विचार-विनिमय क्या मेरे पुत्रो! मैं विशेष विवेचना तो तुम्हें देने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ, केवल परिचय देने चला आता हूँ और वह परिचय क्या है? यमाचार्य के वाक्यों को उद्धृत प्रकट कर रहा हूँ जो उन्होंने कहा है, उन्होंने कहा है कि गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन करो। गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन हम भी करते हैं प्रातःकालीन करते हैं, परन्तु ब्रह्मचारी महान् बन जाते हैं, तपश्चर बन जाते हैं। उन्होंने कहा कि मुझे स्मरण है हे नचिकेता! एक समय हम अपने कुटुम्ब के सहित, अपने बाल्यों सहित भ्रमण करते पर्वतों की कन्दराओं में चले गए, वहाँ एक **सौमकेतु, सौभनी ऋषि महाराज** अपने में याज्ञिक बने हुए थे, और वह अपने आत्मा के इन्द्रियों का साकल्य बना करके अपने में याग कर रहे थे; अपना याग करते हुए हमने कहा, प्रभु! यह क्या कर रहे हो? उन्होंने कहा मैं नाना साकल्य को अपने अन्तर्हृदय, इन्द्रियों के साकल्य बना करके, हृदय रूपी यज्ञशाला में मैं याग कर रहा हूँ। मैं हृदयरूपी यागों में प्रतिष्ठित हो रहा हूँ। जब इस प्रकार का हमने श्रवण किया, तो वहाँ 12 वर्ष हमने भी इस प्रकार का अनुष्ठान किया और 12 वर्षों तक इन्द्रियों के साकल्यों को एकत्रित करके याग किया। हमारा जीवन मृत्यु के लिए व्याकुल हो गया, कि मृत्यु से पार होना चाहिए। तो हे नचिकेता! हम मृत्यु से पार हो जाए। इसी प्रकार में सब को **मृत्यु से पार का नाम ही ज्ञान और विज्ञान कहलाता है।** जब इस प्रकार के उन्होंने नचिकेता को वाक्य प्रगट किए, उन को क्रियाशील रात को वृही वृताम् देवाः क्रियाशील बनाने का उपदेश दिया, तो नचिकेता ने यह स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु आपने हमारे विज्ञान की प्रतिभा को समाप्त कर दिया है हम बड़े प्रसन्न हैं 'युक्ताम् भविताम् लोकाम् हरणयम् वृथा' जब उन्होंने यह वाक् प्रगट किया कि हमारा जीवन एक महानता की ज्योति में प्रवेश हो जाना चाहिए, तो नचिकेता मौन हो गया और उन्होंने कहा धन्य है प्रभु! आपने हमें स्वर्ग में ही नहीं, आपने तो हमें मृत्युञ्जय बनाने की एक

पगडण्डी का पथ दिया है, आपको धन्य है। यहाँ आ करके नचिकेता मौन हो गया और मौन हो करके उन्होंने यज्ञशाला का अपना क्रियाकलाप वर्णन किया। गार्हपत्य नाम की अग्नि का पूजन, अग्नि देवत्व को प्राप्त कराती है, वह देवताओं की आभा कहलाती है, इस प्रकार का उन्होंने जब अपना विचार दिया, उद्गीत बनाने के लिए, तो नचिकेता अपने में मौन हो करके चिन्तन में लग गया।

आहवनीय अग्नि

उन्होंने कहा हे नचिकेता मौन होना नहीं है। एक तृतीय अग्नि कहलाती है जिसको आहवनीय अग्नि कहते हैं। जब माता-पिता बाल्य-बालिकाओं से प्रबल बन जाएँ तो वह भ्रमणम् ब्रह्म देखो गृहा वह अपने में अपने को गृह को त्याग करके भ्रमण करना प्रारम्भ करें, और सात्विकता से भ्रमण करते हुए विद्यालयों में अपने अन्न को देते हुए, विद्यालयों की प्रतिभा को ऊँचा बनाते हुए राष्ट्र, समाज और प्रजा को ऊर्ध्वा में गति कराते हुए, उस अग्नि का पूजन करना चाहिए। वह आहवनीय अग्नि कहलाती है, जो गृह को त्याग करके अपने में अग्नि का पूजन करना है, उस अग्नि के पूजन करने का नाम ही स्वर्ग कहलाता है। हे नचिकेता! यह तीन प्रकार की अग्नि कहलाती हैं, इन तीनों प्रकार की अग्नि के पूजन करने का नाम यह स्वर्ग कहलाता है। तुम स्वर्ग में जाना चाहते हो, तो स्वर्ग के लिए तुम्हें तीन प्रकार की अग्नि का पूजन करना होगा। अग्नियों का पूजन करने वाला स्वर्ग में चला जाता है। इतना उच्चारण करके वह मौन हो गए, उन्होंने मौन हो करके अपने में सान्त्वना को प्राप्त किया।

नचिकेता ने कहा प्रभु! आपने इसमें बहुत कुछ स्वर्ग की कल्पनाएँ कीं। स्वर्ग के लिए आपने हमें बहुत-सा उद्गीत दिया है। हम जानना चाहते हैं कि यह आत्मा शरीर को त्याग करके कहाँ जाता है? यह मेरा तीसरा प्रश्न है। उन्होंने यह वाक् उच्चारण करके सव्रपा व्रतेः

नचिकेता ने वाक् उच्चारण करके मौन हो गए और यमाचार्य ने कहा यह विचार हमारा कल प्रकट होगा।

आज का विचार हमारा अब समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक् उच्चारण करने का हमारा अभिप्राय क्या है? **हमारे वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय है कि समाज को अपनी-अपनी धाराओं को जान लेना चाहिए। प्रत्येक स्थान में अग्नियों का पूजन करना चाहिए।** पूजन का अभिप्राय यह है कि प्रत्येक वस्तु को जान करके उसका सदुपयोग करना, उसको क्रिया में लाना, यही सदुपयोग और उसका पूजन कहलाता है। पूजन का अभिप्राय मैंने कई काल में तुम्हें उच्चारण किया है। आज का वाक्य समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन होगा।

महर्षि महानन्द जी—अच्छा भगवन्!
पूज्यपाद गुरुदेव—आनन्द रहो!

दिनाँक : 28 जुलाई, 1985
समय : साँय 6 बजे
स्थान : लाजपत भवन,
चण्डीगढ़

आवश्यक सूचना

सभी सदस्यों को यौगिक प्रवचन मासिक पत्रिका भेजी जा रही है। पत्रिका प्रत्येक मास की 10/11 तारीख को प्रेषित की जाती है। किसी आजीवन/वार्षिक सदस्य को पत्रिका प्राप्त न होने की स्थिति में हमें एक सप्ताह के बाद लिखें। सूचना मिलने पर पत्रिका पुनः प्रेषित करेंगे।

।। ओ३म् ।।

आग्नेय जीवन

विचार आता रहता है बेटा! मैं तुम्हें उच्चारण कर रहा हूँ कि परमात्मा के क्षेत्र में जाने के लिए मानव संघर्ष को प्राप्त होता है। वह आचार्य को, संन्यासी ब्रह्मवेत्ता को अपने को समर्पित कर देता है और समर्पित करके सर्वभूतेषु बन जाता है। **सर्वभूतेषु किसे कहते हैं,** जो जितनी भी भूतादि ब्रह्मा चाहे वह प्रकृति का मण्डल हो, चाहे वह मानो जड़वत् हो, चाहे चेतन्य हो उसमें सब में उस अपने प्रभु को निहार करके वह मौन हो जाता है, निहारता रहता है और निहार कर वह मौन हो जाता है और वह जो मौन प्रवृत्ति है, वही उसको देखो विज्ञान के, आध्यात्मिक विज्ञान के क्षेत्र में ले जाती है। मनसा-वाचा-कर्मणा इनको त्याग देता है। प्रकृति का मण्डल भी शान्त हो जाता है। वह संन्यासी क्या करता है कि वह लोक लोकान्तरों में क्या, एक-एक अणु और परमाणु में वह मानव दार्शनिक बन करके प्रभु का दर्शन करता है। उस समय जब वह प्रभु का दर्शन करता है, उसी के पश्चात् आभा का जन्म होता है, कौन-सी आभा है जिसमें लोक-लोकान्तरों का अध्ययन करता हुआ, लोक-लोकान्तरों की प्रतिभा में रत्त होता हुआ इस ब्रह्माण्ड में उस प्रभु का ही जो दर्शन करता है। वही तो मानवीय दर्शन है, उसी दर्शन के आधार पर आग्नेय जीवन बन जाता है। संन्यास का अभिप्राय यह है कि जिस समय हम अपने वस्त्रों को परिवर्तित करते हैं, अपने वस्त्रों को आग्नेय जीवन या सबसे प्रथम मानव की आग्नेय प्रवृत्ति होनी चाहिए, आग्नेय ज्ञान होना चाहिए क्योंकि देखो **ज्ञान अग्नि है।** ज्ञान दाह करने वाली है, वह पापों का शोषण करने वाला ज्ञान हमारे समीप आना चाहिए। इस प्रकार हमारा वैदिक साहित्य कहता है। संन्यासी में ज्ञान होना चाहिए वह परमात्मा के निकट जाने वाला हो, अन्यथा देखो वह मार्मिक जीवन बन जाता है। तो विचार-विनिमय क्या है? आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ मेरे प्यारे महानन्द जी अपने दो शब्द उच्चारण करेंगे।

॥ ओ३म् ॥

ऋषियों के उद्‌गार

1. आज हमें अन्न के द्वारा अपनी आत्मा को ऊँचा बनाना चाहिए।
2. वह जो चेतन्य देवता है वही तो मेरी माँ है, वही तो मेरी माँ वसुन्धरा है।
3. हम ज्योति को पान करने का प्रयास करें। उस यज्ञ को करें वह जो सप्त-जिहा यज्ञ है।
4. प्रत्येक गृह में यज्ञ की अग्नि अखण्ड भाव से जलनी चाहिए।
5. हम अध्यात्मिक यज्ञ को करने वाले बनें।
6. जो अपने राष्ट्र को पतित नहीं होने देता, अपनी प्रजा को पतित नहीं होने देता, वह मानवता का दिग्दर्शन करता है।
7. पुत्रों को मानवता तथा राष्ट्रीयता के विचारों से दीक्षित करने वाली माता ही यशस्वी माता है।
8. वैदिक विचार-धारा से ही उज्जवल मानवता की स्थापना हो सकती है।
9. मानवता उस काल में आती है, जब वैदिकता मनुष्य के द्वार पर होती है।
10. विज्ञान में जाना कोई अपराध नहीं परन्तु विज्ञान में मानवता को नष्ट करना अपराध है।
11. देवी पूजा का अभिप्राय यह है कि माता की पूजा करनी है जो जननी है जो जन्म देने वाली है।
12. देवी किसे कहते है जो हमें करूणा देती है जो ममता देती है मान देती है अपनी लोरियों का दुग्धपान कराती है।
13. माता तो उसे ही प्रीति करती है जो उसके अनुकूल कर्म करता है।
14. देवी नाम अग्नि का है देवी नाम वायु का है देवी नाम माता का है।
15. विद्या, सदाचार, मानवता और उच्च-विचार माताओं के आभूषण है।

।। ओ३म् ।।

जन्मदिन की शुभकामनाएँ

वैदिक कुमार

श्रीमति पूनम त्यागी व श्री संजीव त्यागी जी निवास स्थान बल्लभगढ़, हरियाणा (मूल निवासी ग्राम दिनकरपुर, जिला मुजफ्फरनगर) ने अपने सुपुत्र चिरन्जीव वैदिक कुमार के शुभ जन्मदिवस 8 मई 2018 के आगमन पर 5101/- रु. का सात्त्विक सहयोग प्रतिवर्ष की भाँति उदारता से प्रदान किया है। जिससे कि ऋषि मुनियों के क्रियाकलाप को ऊर्ध्वा गति प्रदान करते हुए प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में उनके आशीर्वाद की छत्र-छाया भी निरन्तर स्मरण रूप में बनी रहे। श्री त्यागी जी समिति के प्रकाशन के कार्य में काफी लम्बे समय से सहयोग निरन्तर बनाये हुए हैं और प्रतिमाह एक हजार की राशि 'मासिक सहयोग' के रूप में प्रकाशन के लिए प्रदान कर रहे हैं। जिसके लिए समिति हृदय से बारम्बार आभार प्रकट करती है।

अपने माता-पिता जी की छत्रछाया से ही श्री त्यागी जी पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के ज्ञान से जुड़ गये थे क्योंकि इस याज्ञिक परिवार ने पूज्यपाद गुरुदेव की अनुपम कृपा का शुभ लाभ उनके द्वारा यज्ञों व प्रवचनों के माध्यम से अनेक बार उठाने का सौभाग्य प्राप्त किया। उसी धारा को निरन्तर जागृत रखते हुए अपने सेवाकाल को भी बड़ी निष्ठा व कर्मठता से करते हुए लाक्षागृह बरनावा में आयोजित यज्ञों में अनेक बार पति-पत्नि यजमान बनकर और साहित्य का निरन्तर अध्ययन करते हुए अपने को परिवार सहित ऊर्ध्वा गति प्रदान करने में संलग्न हैं। समिति त्यागी जी के सौभाग्यशाली पुत्र प्रिय वैदिक कुमार को जन्मदिवस की शुभकामनायें प्रदान करते हुए उज्ज्वल भविष्य के लिए परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करती है और समस्त परिवार पुनः से आभार प्रकट करते हुए सुख, शान्ति, दीर्घ आयु व सर्वतोन्मुखी उन्नति के लिये भी ईश्वर से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

*1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
*2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	80.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	60.00
*4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	100.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	60.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	80.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	40.00
10.	शंका-निवारण	35.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
*13.	देवपूजा	50.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	125.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	125.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	125.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	45.00
19.	महाभारत के रहस्य	30.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	50.00
22.	महाराजा-रघु का याग	30.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	35.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	35.00
25.	चित्त की व वृत्तियों का निरोध	35.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	35.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	40.00
29.	याग-मन्जूषा	40.00
30.	आत्म-दर्शन	30.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मात-दर्शन	30.00
32.	याग और तपस्या	60.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	35.00
35.	याग-चयन	40.00
36.	दिव्य-रामकथा	120.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	35.00
38.	दिव्य-ज्ञान	40.00
*39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	90.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	40.00
41.	आत्म-उत्थान	40.00
42.	तप का महत्व	40.00
43.	अध्यात्मवाद	40.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	40.00
45.	वैदिक-प्रभा	35.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	40.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	35.00
50.	आत्मा का भोजन	40.00
51.	साधना	35.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	80.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	50.00
*56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	80.00
57.	माता मदालसा	60.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	80.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	80.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	80.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
*63.	यौगिक प्रवचन माला भाग-12	80.00
64.	मानव कल्याण की चर्चाएँ	50.00
65.	प्रभु-दर्शन	50.00
*66.	यौगिक प्रवचन माला भाग-13	80.00
*67.	समाज उत्थान का मार्ग	50.00
*68.	यौगिक प्रवचन माला भाग-14	80.00
*69.	ब्रह्म की ओर	50.00
*70.	ईश्वर मिलन	50.00
*71.	यौगिक प्रवचन माला भाग-15	80.00
*72.	यौगिक प्रवचन माला भाग-16	80.00
*73.	नैतिक शिक्षा	50.00
*74.	यौगिक प्रवचन माला भाग-17	100.00
*75.	आत्मिक ज्ञान	60.00

*सहजिल्द का मूल्य 20 रु. अतिरिक्त है।

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध हैः–

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला–बागपत, (उ.प्र.)। मोबाइल नं 09719622950
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। मोबाइल नं. 09412888050
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष नं. 011-41030481
5. श्री जितेन्द्र चौधरी, ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मो. नं. 9811707343
6. श्री अनिल त्यागी सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-4165802
7. श्री आशीष त्यागी, सुपुत्र श्री सुशील त्यागी डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0120-2642052
8. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09410452076
9. श्री विवेक त्यागी, 16ए, आलोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड़, (उ.प्र.)। दूरभाष नं. 0122-2316196
10. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। मोबाइल नं. 09910589486
11. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110–मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 9899228860, 9871367937
12. पवन त्यागी सुपुत्र श्री राजाराम त्यागी, मौ. खड़खड़ियान, माता, ग्राम खरखौदा, जिला मेरठ (उ.प्र.) मोबाइल नं. 7536097171
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23282088
14. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे. पी. नगर (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09412139333
15. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) मोबाइल नं. 09313530505
16. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
17. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष नं. 011-23977216

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद, हरियाणा	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव चावला, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्री राकेश शर्मा, विराट नगर, पानीपत, हरियाणा	250 रुपये
श्री कृष्ण लाल बत्रा, इन्द्री, जिला करनाल	201 रुपये
मास्टर कवन्धि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
कुमारी अञ्जलि त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश	101 रुपये
मास्टर सात्विक त्यागी, अँकुर अपार्टमैन्ट, पटपड़ गंज दिल्ली	101 रुपये
मास्टर अभ्युदय त्यागी, न्यू जर्सी, अमेरिका	101 रुपये

नम्र-निवेदन

समिति के बैंक के खाते में दान की राशि हस्तान्तरण करने से दानदाताओं का नाम, पता व उद्देश्य इत्यादि की जानकारी बैंक से पास नहीं हो पाती इसलिए सभी दानदाताओं से नम्र-निवेदन है कि राशि बैंक के खाते में हस्तान्तरण करने के साथ समिति की वेबसाइट पर या निम्न किसी भी एक पते पर दान राशि का अन्य विवरण सहित सूचना देने का कष्ट करें–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
   ए-59, पँचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-41030481
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   के-3, लाजपत नगर-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

ब्रह्म की चेतना ही सँसार में अपना कार्य कर रही है। ब्रह्मविद्या ही मानव को ऊँचा बनाती है, और राष्ट्र में धर्म को ला देती है। इसलिए आज हमें ब्रह्मविद्या की आवश्यकता है। जब प्रत्येक मानव धर्मनिष्ठ और ब्रह्मनिष्ठ होता है तो उसी काल में उसकी विचारधारा में एक महानता का दिग्दर्शन और उसके हृदय में महानता की प्रतिष्ठा हो जाती है। जिससे वह महान् कहलाता है। मानव की जो वाणी होती है उसका सम्बन्ध अग्नि से होता है। इसलिए हमारे यहाँ किसी-किसी ऋषि ने अग्नि को भी उद्‌गाता कहा है। आज जो हम प्रभु की याचना कर रहे हैं। हे प्रभु! तू स्वयं यज्ञ है। तेरी महानता इन वेदों में परिणत हो रही है। वेद की जो अनुपम धारा है वही प्रकाश, मानव के अन्तःकरण को पवित्र बनाता है। क्योंकि वेद की जो अनुपमता है, ब्रह्मविद्या है, महानता है, उसमें उसका एक-एक शब्द पक्षपात से रहित है। उसी को तो ब्रह्मविद्या कहते हैं। क्योंकि परमात्मा में रूढ़ि नहीं होती, इसलिए वेद में भी रूढ़ि नहीं है। इसलिए वेद के अनुसार मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहिए। जो मानव रूढ़ियों में परणित हो जाते हैं, उनके जीवन में विनाश हो जाता है। उनका जो मानसिक सँकल्प होता है, उसकी धाराओं में भिन्नता आ जाती है।

पूज्यपाद-गुरुदेव

वर्ष 46 : अंक : 548
मई 2018

मूल्यः
दस रुपये

RNI No. 23889/72
Delhi Postal R. No. DL (S)-01/3220/2018-2020
Licence to Post without prepayment
U (SE)-70/2018-2020
POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-05-2018
Published on 5th day of the same month